(107)

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

एक स्वयंसंपूर्ण कार्य

श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

एक स्वयंपूर्ण कार्य-पद्धति

मेरे लिए यह बहुत ही आनंद की बात है कि आज आप सब लोगों के बीच में, मैं अपने को पा रहा हूँ। इसमें बहुत से लोग बहुत पुराने परिचित हैं, कुछ नये भी हैं और जिस विषय पर बोलना है वह भी बड़ा प्राचीन है, 1925 से चलता आया हुआ जो विषय है उसी के संबंध में बोलना है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इसका ध्येय क्या है, इसके विषय में नए सिरे से कुछ बोलने की आवश्यकता है, यह मैं नहीं समझता। यहाँ आए हुए सभी लोग संघ के ध्येय को अच्छी तरह से जानते हैं। अपनी प्रार्थना में जो कहा गया है, "परं वैभवं नेतुमेतत् स्वराष्ट्रम्" इस राष्ट्र को परम वैभव की ओर ले जाना यह अपना ध्येय है। इस ध्येय की प्री-कंडीशन (Precondition), शर्त इस नाते कहा गया, "विधायास्य धर्मस्य संरक्षणम्" धर्म की रक्षा हो और धर्म की रक्षा के लिए आधार कहा गया, 'विजयैत्री च न: संहता कार्यशक्ति', अपनी जो संगठित विजय शालिनी कार्यशक्ति है, माने संपूर्ण समाज का संगठन, यह इसका आधार है। इस आधार पर धर्म की रक्षा होगी, जिसके फलस्वरूप राष्ट्र को परम वैभव प्राप्त होगा। यह रचना बहुत समय से अपने सामने हैं। अत: इस विषय में विशेष विवरण देने की आवश्यकता नहीं समझता।

एक स्पष्ट ध्येय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने अपने सामने रखा है, किंतु संघ की यह विशेषता है कि केवल ध्येय सामने रख कर ही वह संतुष्ट नहीं; तो उसकी ओर जाने वाला रास्ता भी संघ ने दिखाया है, कार्य पद्धति भी उसी तरह की

निर्माण की है। जिस कार्य पद्धति के विषय में अपने 52 साल के अनुभव के आधार पर हम ऐसा कह सकते हैं कि संपूर्ण हिंदू समाज को संगठित करने की दृष्टि से एकमात्र उपयुक्त, प्रभावी कार्य पद्धति कोई होगी तो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की ही कार्य पद्धति है, कोई दूसरी कार्यपद्धति नहीं।

यह ठीक है कि देश में तरह-तरह की संस्थाएं चलती है और शायद ही कोई ऐसी संस्था होगी जिसकी कार्यपद्धति इतनी रूखी, इतनी कठिन हो, इतनी धीरज वाली हो जितनी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की है। इसमें बहुत धीरज लगता है। लगातार काम करना पड़ता है। कोई रोमांटिक बात इसमें नहीं है। काम ही करना है और कुछ नहीं। तरह-तरह के सुझाव भी बीच-बीच में आते रहते हैं कि जरा कार्यक्रमों को आकर्षक बनाना चाहिए, यह करना चाहिए, वह करना चाहिए किंतु मालूम होता है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेता लोग कुछ रोमांटिक नहीं है। इस कारण ऐसे आकर्षक सुझावों को भी स्वीकार नहीं करते। अभी तक नहीं किया और मैं समझता हूँ कि इसके आगे भी वह होने वाला नहीं। किंतु इस कार्य पद्धति के विषय में यह हमारा निष्कर्ष है कि यही एकमात्र रास्ता है जो हमें अपने ध्येय की और पहुंचाएगा।

इस दृष्टि से संघ की कार्य पद्धति स्वयंपूर्ण है। स्वयंपूर्ण है इसका अर्थ क्या है? स्वयंपूर्ण है इसके दोनों अर्थ है। यदि हम इस कार्य पद्धति को लेकर काम करते हैं तो संघ का ध्येय सिद्ध करने के लिए दूसरी किसी भी पूरक कार्यपद्धति (सप्लीमेंट्री टेक्निक) की आवश्यकता नहीं और किसी भी कारण यदि हम इस कार्य पद्धति को छोड़ देते हैं तो दूसरी कोई सब्स्टीट्यूट, अल्टरनेटिव (Substitute, Alternative), वैकल्पिक कार्य पद्धति या टेक्निक ऐसा नहीं हो

सकता जो हमें वहाँ पहुंचाएगा जहाँ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ हमें पहुंचाना चाहता है। दोनों अर्थों में माने इसको लेकर चलते हैं तो फिर सप्लीमेंट्री कार्यपद्धति की आवश्यकता नहीं और इसको छोड़कर चलते हैं तो फिर कोई सब्स्टीट्यूट, अल्टरनेटिव (Substitute, Alternative) कार्यपद्धति हो नहीं सकती, जो हमारा ध्येय सिद्ध कर सकती हो, दोनों ही अर्थों में हमने कहा कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की कार्य पद्धति स्वयंपूर्ण है।

अब अलग-अलग कार्य पद्धतियों को देखकर लोगों के मन में मोह होना स्वभाविक है कि भाई, इतना लंबा रास्ता किस लिए लिया है, जरा शॉर्टकट ले लेते। ऐसा लगना स्वाभाविक है और हम शॉर्टकट नहीं ले सकते ऐसी बात नहीं, लेकिन शॉर्टकट से ध्येय सिद्ध नहीं होगा। हमने यदि यह सोचा है कि ऐसी बिल्डिंग बनानी है जो मैसूर के महाराजा के पैलेस के जैसी हो, तो हमें करोड़ों रुपए लगाने होंगे, सालों तक काम करना पड़ेगा, हजारों मजदूर और कारीगरों को काम पर लगाना पड़ेगा और आप यदि कहेंगे कि हम करोड़ों रुपए खर्च करने के लिए तैयार नहीं, हजारों मजदूरों को काम पर लगाने के लिए तैयार नहीं, हमें तो 2 मिनट में बंगला बना दो। तो 2 मिनट में बंगला बन नहीं सकता ऐसा नहीं है, 2 मिनट में भी बंगला बन सकता है। उदाहरणार्थ एक लड़के को मार्केट में भेज दो, 2-3 रुपये में ताश आएगी आ जाएगी, 2 मिनट में ताश का महल खड़ा हो जाएगा। आपको कम खर्च में काम करना है तो वह हो सकता है, लेकिन इतना ही है कि ₹2 में और 2 मिनट में मैसूर के महाराजा का पैलेस नहीं खड़ा होगा, ताश का महल खड़ा होगा और जैसे ही हवा का झकोरा आएगा तो वह महल उड़ जाएगा। वह मैसूर के महाराजा का पैलेस के जैसे मजबूत नहीं रहेगा। आप दोनों बातें इकट्ठा नहीं चाह सकते।

पैलेस होना चाहिए लेकिन ₹2 में होना चाहिए ऐसा नहीं हो सकता। हर एक बात की अपनी कीमत है। वह कीमत चुकानी ही पड़ेगी।

कोई कहेगा कि यह ट्रेन है; बड़ा ज्यादा समय लेती है। हमें थोड़ा समय लेने वाली ट्रेन में बैठा दो, तो बैठाया जा सकता है, लेकिन फिर आप गंतव्य स्थान पर नहीं पहुंचेंगे। ऐसे बीच में किसी छोटे स्टेशन पर आप का प्रवास समाप्त हो जाएगा। गंतव्य स्थान पर पहुंचना है तो वही ट्रेन लेनी पड़ेगी, शॉर्टकट की चाह यह हर समय अच्छी नहीं होती। मुग़लसराय का रेलवे यार्ड बड़ा प्रसिद्ध है। इस रेलवे यार्ड में हमेशा शंटिंग चलती रहती है। ब्रिज भी है किंतु तो भी लोग शॉर्टकट ढूंढते हैं। ब्रिज पर से जाना, ऊपर चढ़ना होगा, नीचे उतरना होगा, समय जाएगा, पैरों को तकलीफ होगी तो सीधे रेलवे लाइन क्रॉस करना चाहते हैं। तो इसके कारण एक्सीडेंट होंगे, क्योंकि शंटिंग हमेशा चलती रहती है। रेलवे ने एक साइन बोर्ड भी वहाँ लगाया है जिस पर लिखा है 'Beware shortcut will cut you short', बड़े काम के लिए कोई शॉर्टकट नहीं हो सकता। तो जो संघ की कार्यपद्धति है वही हमें, 'एष: पंथा, नान्य: पंथा विद्यते अयनाय', यह जो प्राचीन वाक्य है इसके अनुसार यह कार्य पद्धति ही हमें ध्येय तक पहुंचाएगी। इस श्रद्धा के साथ काम करना है। यह स्वयं पूर्ण कार्यपद्धति है। किसी पूरक कार्यपद्धति की आवश्यकता नहीं। दूसरी सब्स्टीट्यूट कार्यपद्धति हो नहीं सकती। यह श्रद्धा लेकर हम काम कर रहे हैं।

अब इस कार्य पद्धति की अपनी कुछ विशेषताएं हैं। दिन-प्रतिदिन एकत्रीकरण यह तो केंद्र बिंदु है और बार-बार एकत्रित आना, चाहे शिविर के रूप में हो, कहीं ट्रिप के लिए जाना हो, ऐसे कार्यक्रम इसकी विशेषता है। और जो संघ का

कार्य बढ़ रहा है, उसके बढ़ने का भी अपना एक अनोखा तरीका है, और वह तरीका है - संपर्क, व्यक्तिगत संपर्क, पब्लिसिटी नहीं। आजकल यह जो सस्ता रास्ता निकला है कि न्यूज़ पेपर में पब्लिसिटी कर दो, उससे सब कुछ हो जाएगा। आजकल जो लोग संघ को दोष देते हैं, संघ के समर्थक भी कि लंबा रास्ता क्यों निकाला है? इनके पास अभी दिमाग नहीं है, कल्पना शक्ति इनकी जागृत नहीं है, न्यूज़ पेपर का उपयोग करो, रेडियो का उपयोग करो, TV का उपयोग करो, धुआंधार प्रचार चलने दो, इससे सब कुछ हो जाएगा। इसके लिए हर दिन शाखा पर आना, निक्कर पहनना, जाड़े के दिनों में ब्लैंकेट छोड़कर बाहर आना, इसकी जरूरत क्या है? अखबार, टीवी, रेडियो से सारा राष्ट्र का काम हो जाएगा ऐसा लोग समझते हैं।

प्रचार का एक अपना उपयोग है। नहीं है, ऐसा नहीं। लेकिन प्रचार का उपयोग क्या है? मत परिवर्तन, बौद्धिक स्तर पर मत परिवर्तन, इतना ही उसका परिणाम है। हृदय में परिवर्तन, मन में परिवर्तन, आत्मा में परिवर्तन, यह प्रचार से नहीं हो सकता। मान लीजिए हमने ब्रह्मचारी क्लब शुरू किया और उसका ध्येय इतना ही रखा कि हिंदुस्तान के सब लोगों को यह बात जचाना की ब्रम्हचर्य का पालन अच्छा है, ब्रह्मचर्य को छोड़ना खराब बात है। बौद्धिक स्तर पर लोगों का मत परिवर्तन करना, इतना ही हमने उद्देश्य रखा तो हम ब्रह्मचर्य के पक्ष में धुआंधार प्रचार कर सकते हैं, न्यूज़पेपर में, रेडियो में, टीवी पर जनता का मत परिवर्तन हो सकता है और कल यदि रेफरेंडम, जनमत संग्रह हुआ तो ब्रह्मचर्य के पक्ष में जो हैं, उन्हें Vast majority, Overwhelming majority मिल सकती है। मत परिवर्तन हो सकता है, लेकिन यदि कोई कहेगा कि इस धुआंधार प्रचार के फलस्वरूप देश में ब्रम्हचर्य का पालन करने वालों की संख्या बढ़ेगी तो यह

भ्रम है, भ्रांति है, ब्रह्मचर्य पालन करने वाले लोगों की संख्या प्रचार से नहीं बढ़ेगी, ब्रह्मचर्य अच्छा है ऐसा वोट करने वालों की संख्या बढ़ सकती है। ब्रह्मचर्य पालन करने वालों की संख्या प्रचार करने के कारण नहीं बढ़ सकती, उसके लिए कुछ और माध्यम है। तो वोटर बनाना एक अलग बात है, स्वयंसेवक बनाना अलग बात है। वोटर और स्वयंसेवक में अंतर क्या है? यह समझ लेना चाहिए। ब्रह्मचर्य का पालन करना अच्छा है, ऐसा जो वोट देता है बैलेट बॉक्स में वह वोटर है और जो स्वयं ब्रह्मचर्य का पालन कर रहा है, वह स्वयं सेवक है। ऐसा यदि उदाहरण देकर बताना हो तो यह कहा जा सकता है कि केवल मत परिवर्तन- सच बोलना चाहिए, अच्छा व्यवहार करना चाहिए, संपूर्ण विश्व को अपना मानना चाहिए, ऐसा जिसका मत है वह वोटर है, परंतु ऐसा जिसका व्यवहार है और उसके लिए आत्म बलिदान करने के लिए तैयार है, वह स्वयंसेवक है। मत और साक्षात्कार, वोट और रियलाइजेशन (Realisation) इसमें बड़ा अंतर है और यह केवल प्रचार के द्वारा होने वाला काम नहीं। इसके लिए दिन-प्रतिदिन हृदय में संस्कार अंकित करने की आवश्यकता है। जिस वायुमंडल में यह संस्कार अंकित होते हैं उस वायुमंडल में हर एक को एक घंटा रहने की आवश्यकता है। स्वयं रहने की आवश्यकता है, लोगों को वायुमंडल में ले जाने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से अपने विस्तार का माध्यम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने प्रचार नहीं माना अर्थात टीवी और रेडियो नहीं माना, तो मेन टू मेन कांटेक्ट, हार्ट टू हार्ट टॉक। एक एक आदमी के साथ संपर्क, एक-एक आदमी के साथ हृदय से बातचीत, यह माध्यम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने माना है।

संपर्क हमारे विस्तार का माध्यम है। अपने एक संघ गीत में कहा गया 'संपर्क अमृत को पिलाकर' तो हमारे विस्तार का माध्यम है- संपर्क। संपर्क जितना हम अधिक करेंगे और अच्छा करेंगे, उतना हमारा विस्तार अधिक होगा, अच्छा होगा। इसके लिए भी जो हमारे स्वयंसेवक हैं, उनके मन में, उनकी दृष्टि में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ आने की आवश्यकता है। संघ के संस्कार हृदय में अंकित होने की आवश्यकता है ही, लेकिन यह होने के बाद भी स्वयंसेवक की दृष्टि में यदि संघ न रहा तो अपने चौबीस घंटे का उपयोग वह संघ के लिए नहीं कर सकता। हमारा माध्यम संपर्क है। अब संपर्क अलग-अलग लोगों से आता है। जो विद्यार्थी हैं, उनका स्कूल-कॉलेज में प्रोफेसर और विद्यार्थियों से संपर्क आता है दुकानदारों का अपने ग्राहकों से संपर्क आता है, वकीलों का अपने क्लाइंट से संपर्क आता है, डॉक्टरों का अपने पेशंट के साथ संपर्क आता है। फैक्टरी मजदूरों का अपने बाकी मजदूरों के साथ और मेनेजमेंट के साथ संपर्क आता है। माने जिसका जो जीविकोपार्जन का साधन होगा, मुख्य काम होगा, उससे संबंधित संपर्क आता है। अब जीवन में जो सारा संपर्क है वह, संघ के लिए उपयोग में लाना है, यह हम ख्याल में रखें। जो कुछ भी काम होता है, वह उपयुक्त Purposeful संपर्क के माध्यम से होता है, इसलिए हर एक काम का उपयोग संघ के लिए करना यह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की पुरानी पद्धति है। परम पूजनीय डॉक्टर जी के जीवन में क्या हमने पढ़ा नहीं कि संघ की स्थापना के पश्चात भी डॉक्टर जी ने कई बातों में हिस्सा लिया। भाग्यनगर सत्याग्रह में अपने स्वयंसेवकों को भेजा, व्यक्तिगत हैसियत में और भी कई आंदोलनों में हिस्सा लिया। भागलपुर के हिंदू महासभा के अधिवेशन के समय जो सत्याग्रह हुआ उस में हिस्सा लिया। अब यह जो सारा हुआ तो कांग्रेस का

क्या होगा, हिंदू सभा का क्या होगा यह बात हमारे कार्यकर्ताओं के सामने नहीं थी। भाग्य नगर के समय अपने भैया जी दाणी प्रमुख थे। भागलपुर के समय बाबासाहेब घटाते प्रमुख थे। स्वयं डॉक्टर जी यवतमाल के जंगल सत्याग्रह में जेल गए थे, अकोला जेल में थे। लेकिन हम सब लोगों ने उनका जीवन पढा है, हम जानते हैं कि हर एक का उपयोग जहाँ हम जाएंगे, जेल में रहेंगे तो वहाँ अच्छे-अच्छे स्वार्थ त्यागी लोगों के साथ संपर्क आयेगा। उसी संपर्क के माध्यम से हम उनको संघ की ओर झुका सकेंगे और जेल के बाहर आने के बाद जहाँ-जहाँ वह लोग फैले हैं, वहाँ जाकर हम शाखाएं शुरू कर सकेंगे यह हिसाब किताब मन में रखते हुए ही जेल की यात्रा हुई और अलग-अलग आंदोलनों में हिस्सा लिया गया यह बात हम जानते हैं। मैं एक कॉलेज में था। तो मुझे पता है कि हम लोगों को कॉलेज की बाकी गतिविधियों में खास रुचि (interest) नहीं थी, लेकिन संपर्क बढ़ाने के लिए तरह तरह की गतिविधियों में हम हिस्सा लेते थे। अपने जो प्राचीन प्रचारक हैं, डॉक्टर जी के समय के कृष्णराव मोहरील उनका नाम है। आप लोगों में से कई लोगों ने उनको देखा है। कृष्ण राव मोहरील को कॉलेज की किसी गतिविधि में रुचि नहीं थी। सारी रूचि उनकी संघ में ही थी, इसीलिए उन्होंने किसी भी वर्ग में पास होने की जल्दबाजी नहीं की। पूरे धीरज के साथ एक-एक कक्षा में वे रहे और कॉलेज में क्या चलता है, क्या नहीं कभी उन्होंने देखा भी नहीं, लेकिन एक बार अपने स्वयंसेवकों ने सोचा कि भाई ज्यादा लोगों के साथ और प्रिंसिपल-प्रोफेसर के साथ यदि संपर्क लाना है तो यह जो सोशल गैदरिंग होता है उस का चुनाव लड़ना चाहिए, जनरल सेक्रेटरी इनको चुनकर लाना चाहिए, फिर उस कैपेसिटी में प्रिंसिपल वगैरह के साथ संपर्क आएगा तो उन पर

प्रभाव जमाया जा सकता है। वह खड़े हो गए, चुनकर आ गए, अच्छा काम किया। अब उन्होंने कभी सोशल गैदरिंग में अटेंड ही नहीं किया, लेकिन काहे के लिए यह? तो संपर्क का माध्यम इस नाते हर चीज की ओर देखा गया।

अब हम 24 घंटे कुछ ना कुछ करते रहते हैं कि नहीं, खासकर जीविकोपार्जन के लिए कुछ करते हैं, हॉबी के नाते हम कुछ काम करते हैं, कुछ तो हम करते ही हैं। इसमें लोगों का संपर्क आता है कि नहीं, आता है। लेकिन इसी संपर्क का उपयोग हम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के लिए करते हैं क्या? यह सवाल है। यह हमने compartmentalisation मन में किया है? जैसे ईसाई लोगों के बारे में कहते हैं कि रविवार का दिन सुबह रिलीजन के लिए बाकी दिन रिलिजन छोड़कर बाकी धंधों के लिए ऐसा हमने सोचा है क्या कि यह एक घंटा स◌ंघ के लिए बाकी 23 घंटा हमारे नॉन संघ काम के लिए। ऐसा अपने यहाँ डिवीजन नहीं है कि एक घंटा संघ को दे दिया बाकी संघ को भूल जाना। अपने माननीय बाबा साहब आपटे ऐसा कहते थे कि हम एक घंटा संघ स्थान पर आते हैं। यह जो एक घंटा है वह इसकी परीक्षा है कि बाकी के 23 घंटों में हमने संघ का काम कितना किया है इसका मापदंड यह एक घंटा है। इस नाते बाकी के 23 घंटे हमें बिताने हैं ऐसा माननीय बाबासाहेब आपटे कहते थे। तो 24 घंटा हमारा चिंतन संघ का ही होना चाहिए, संघ 'दृष्टि' में आना चाहिए। आप कहेंगे यह दृष्टि में आना समझ में नहीं आ रहा है, किंतु समझ में आ सकता है। आप कल्पना कीजिए कि रास्ते के किनारे फुटपाथ पर दो कारीगर बैठे हैं। एक कारीगर है नाई, बार्बर। ऐसे न◌ाई अब कोलकाता में कम है लेकिन उत्तर प्रदेश में कई न◌ाई रास्ते के किनारे बैठते हैं और ईंट देकर वह अपने क्लाइंट को वहाँ ईंट पर बैठाते हैं। वही◌ं दाढ़ी वगैरह बना

लेते हैं, इसलिए हमारे लोगों ने ऐसे जो रास्ते पर बैठने वाले नाई हैं और जो ईंट पर बैठाकर अपने क्लाइंट की दाढ़ी बनाते हैं उनका नाम इटालियन बार्बर रखा है। तो ऐसे इटालियन बार्बर भी रास्ते के किनारे हैं और रास्ते के किनारे मोची भी है। अब मोची भी तरह तरह के हो सकते हैं, नाई भी तरह-तरह के हो सकते हैं। लेकिन आदर्श मोची कौन सा है? रास्ते पर से सैकड़ों लोग आना-जाना करते हैं, किंतु जो आदर्श मोची है, वह आपको बोल नहीं सकेगा कि किस शक्ल का आदमी, कौन सा सूट पहनकर और कौन सा शर्ट पहनकर जा रहा था, वह नहीं बोल सकेगा। वह इतना बोल सकेगा कि किस आदमी का बूट फटा हुआ था और चप्पल को दुरुस्त करने की आवश्यकता थी। उसकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी या नहीं बढ़ी थी, उसने कंघी की थी या नहीं, वह गोरे थे या काले थे, यह आदर्श मोची नहीं बता सकेगा और आदर्श नाई जो है वह आपको यह बता नहीं सकेगा कि सामने से जो आदमी गया है, वह बाटा का जूता पहना था या फटी हुई चप्पल थी या नंगा पेर था। वह नहीं बता सकेगा। वह केवल यह बता सकेगा कि उसको दाढ़ी बनाने की आवश्यकता थी या नहीं, कटिंग की आवश्यकता थी या नहीं, उसके बाल सफेद थे या काले थे, यह बता सकेगा, क्योंकि जो आदर्श नाई है उसके ख्याल में, उसकी दृष्टि में उसका धंधा आता है, इसलिए मोची का सारा कंसन्ट्रेशन पेर पर रहता है। नाई का सारा मनोयोग सूरत-शक्ल पर रहता है। जैसा इनकी दृष्टि में इनका धंधा आता है, स्वयंसेवक की दृष्टि में स्वयंसेवकत्व और संघ आना चाहिए। हर चीज की ओर संघ दृष्टि से देखना, हर चीज की ओर। और इस दृष्टि से जहाँ-जहाँ हम खड़े हैं, वहाँ-वहाँ संपर्क बढ़ाना तो संपर्क यह माध्यम है संघ कार्य के विस्तार का। इस नाते हम जहाँ कहीं काम करते हो,

जहाँ जो-जो संपर्क में आते हैं, उनके उपयोग से, उनका उपयोग करते हुए संघ का प्रभाव और आकर्षण लोगों के मन में कैसे बढ़ा सकते हैं इसका विचार करना चाहिए। अब यह बात कुछ न कुछ मात्रा में, मैं समझता हूँ हर एक स्वयंसेवक थोड़ा बहुत करता ही है। किंतु जरा ज्यादा एकाग्रचित होकर यह करने की आवश्यकता है। consciously यानी समझ बूझकर करने की आवश्यकता है।

आज हम ज्यादा consciously, ज्यादा समझकर नहीं कर रहे हैं, तो भी अच्छे परिणाम निकल रहे हैं। ज्यादा consciously करेंगे तो इससे ज्यादा अच्छे परिणाम निकल सकते हैं। यह बात स्पष्ट है। इसी संपर्क माध्यम से ही और फिर कुछ आनुषंगिक फल के नाते, संघ कार्य के लिए पूरक इस नाते नहीं, क्योंकि संघ कार्य के लिए कोई पूरक कार्य की आवश्यकता नहीं, संघ कार्य स्वयं पूर्ण है, लेकिन स्वाभाविक रूप से विभिन्न स्वयंसेवक हर एक क्षेत्र में संपर्क के लिए यदि प्रयास करते हैं। तो कार्य क्षेत्र एक ही हो, स्वयंसेवक बहुत हों और संपर्क के लिए सब का प्रयास चल रहा हो, तो स्वाभाविक रूप से उन प्रयासों में भी कुछ एकरूपता आना, कुछ को-आर्डिनेशन आना स्वभाविक है। अब जैसे-जैसे स्वयंसेवकों की संख्या बढ़ती गई, उनका संपर्क का प्रयास बढ़ता गया तो विभिन्न कार्य क्षेत्रों में स्वाभाविक रूप से कुछ एक संगठित कार्य का भी उदय हुआ है। विकास हुआ है। यह एक आनुषंगिक फल है। संघ कार्य के लिए पूरक इस नाते incidentally एक ही कार्य क्षेत्र में विभिन्न लोग जब संपर्क का काम करने लगे, तब अलग-अलग कार्य करते थे, उसी को जरा cohesion उसमें लाया जाए, को-आर्डिनेशन उसमें लाया जाए, ऐसा जब देखा गया, उसका स्वरूप संगठित हुआ संपर्क का, स्वयंसेवकों के द्वारा संपर्क का

संगठित प्रयास ऐसा उसका स्वरूप हुआ। आजकल जो संगठित प्रयास होते हैं उनको जन संगठन, mass organisation कहा जाता है। ऐसी कुछ mass organisation खड़ी हुई है। यह सारा संपर्क का आनुषंगिक फल है। व्यक्तिगत रूप से जहाँ संख्या कम है, संपर्क का प्रयास होता ही है। एक-एक क्षेत्र में ज्यादा लोग संपर्क कर रहे हैं उसमें co-ordination लाने की स्वभाविक इच्छा और उसके फलस्वरूप संगठित प्रयास होता है, उसी का एक दृश्य परिणाम mass organisation, जन संगठन ऐसा दिखाई देता है। अनेक जनसंगठनों में भी हमारे स्वयंसेवक काम कर रहे हैं, विभिन्न क्षेत्रों में। अब यह जो संपर्क का एक माध्यम है इस नाते इसका महत्व है। और इस दृष्टि से वह कार्य ठीक ढंग से करने की आवश्यकता है। दोनों तरफ से एक्सट्रीम पर हम न जाएं, यह सतर्कता बरतने की आवश्यकता है। अब जन संगठन संघ के स्वयंसेवकों के माध्यम से ही शुरू हुआ ऐसी तो बात नहीं। पहले से ही जनसंगठन चलते आए हैं। उनकी कार्य करने की पद्धति भी चलती आई है। अपने स्वयंसेवक भी जन संगठनों में कार्य कर रहे हैं। जन संगठन चला रहे हैं किंतु यह सारा चलाते समय मूल बात को यदि हम भूल जाएंगे तो फिर ऐसा होगा, जैसे एक छोटा बच्चा होता है। मां की गोद में बैठा हुआ होता है। आंगन में वह देखता है कि कोई अच्छी लाल रंग की गेंद आंगन में है। छोटा बच्चा अच्छे ब्राइट कलर पर आकृष्ट होता है। मां को कहता है, 'मां मैं यह गेंद ले कर आता हूँ', तो मां की गोद से उठकर वह आंगन में आता है, गेंद लेता है। गेंद हाथ में लेता है तो उसको लगता है गेंद जरा खेलना चाहिए। उसके साथ में खेलने लगता है और खेलने में वह इतना रममान हो जाता है कि फिर से मां के पास जाना है, यह भूल जाता है। मां अपनी राह देख रही है यह भूल जाता है। मां

के पास जाना यह मेरा कर्तव्य है यह भूल जाता है। खेलने में ही रममान हो जाता है। बच्चे के लिए तो यह बात ठीक है किंतु हम लोगों के लिए यह बात ठीक नहीं। हमने आंगन में जाना है। गेंद को उठाना भी है। आकर्षक है यह भी समझना है। तो भी उसको लेकर फिर से मां की गोद में आकर बैठना है। ऐसा यदि ना हुआ तो बच्चा और हमारे में कोई अंतर नहीं रहेगा। तो जहाँ जन संगठनों में हम लोग काम कर रहे हैं वहाँ एक तो सतर्कता यह रखने की आवश्यकता है कि हम स्वयं अच्छे स्वयंसेवक रहेंगे तभी जनसंगठनों में हम अपनी आइडियोलॉजी का प्रभाव निर्माण कर सकेंगे। अब अच्छा स्वयंसेवक बनने के लिए दिन-प्रतिदिन शाखा की उपस्थिति अनिवार्य है, अपरिहार्य है। कई लोगों के अंदर यह एक्सक्यूज़ देने की एक प्रवृत्ति आ जाती है। कहते हैं कि देखिए आपको पता ही नहीं यह जो हमारा मजदूर क्षेत्र है। मैं भी कह सकता हूँ कि आपको क्या पता है, आप तो केवल दक्ष-आरम कर रहे हैं। दुनिया कहाँ जा रही है आपको मालूम ही नहीं। हमको तो रात-रात भर बैठ कर सारे हिंदुस्तान के मजदूरों की फिक्र करनी पड़ती है। हम कैसे प्रभात शाखा में आ सकते हैं। पूरे देश की फिक्र करेंगे या तुम्हारी शाखा की फिक्र करेंगे? ऐसा मैं कह सकता हूँ। कहना तो आसान है लेकिन मैं भूल जाता हूँ कि क्या मैं अकेला काम करने वाला हूँ? जो किसी जन संगठन में नहीं हो, केवल अपनी दुकान चलाना ही उसका काम है तो उसको रात में जागरण नहीं करना पड़ता? दुकान के बारे में सोचना नहीं पड़ता? कौन सा माल मंगवाना है, कहाँ से क्रेडिट लेना है, किस बैंक के पास पहुंचना है, अपने ग्राहक कैसे बढ़ा सकते हैं, एडवर्टाइजमेंट देना या ना देना, उसको अपने कारोबार के बारे में सोचना नहीं पड़ता? उसका जागरण नहीं होता? जो भी आदमी, काम छोटा रहे या बड़ा रहे, हर एक आदमी

यदि काम इमानदारी से करेगा तो ‘अमाउंट ऑफ वर्क’ समान होता है। चाहे प्राइवेट लाइफ में हो या पब्लिक लाइफ में हो, जो आदमी इमानदारी से काम करेगा उसका ‘अमाउंट ऑफ वर्क’ समान होता है, ‘टाइप ऑफ वर्क डिफरेंट’ होगा, ‘क्वालिटी ऑफ वर्क डिफरेंट’ होगा, ‘अमाउंट ऑफ वर्क’ की दृष्टि से देखा जाए तो कोई छोटा नहीं है, कोई बड़ा नहीं है। सब समान है। हाई स्कूल में हमारी एक कविता थी, ‘The mountain and the Squirrel’ जिसमें वह पहाड़ Squirrel से कहता है कि अरे तुम तो छोटी हो, देखो हम पहाड़ , कितने बड़े और फैले हुए हैं। तो वह कहती है ‘ठीक है तुम तो बहुत बड़े हो और मैं छोटी हूँ, लेकिन वह कहती है कि-

Everything is well and wisely put

Talents differ.

If I can’t grow a forest at my back

Neither can you crack a nut.

यह ठीक है कि तुम्हारे सामान मे, मेरी पीठ पर जंगल नहीं उगा सकती, लेकिन मेरे सामान तुम सुपारी भी फोड़ नहीं सकते। तो मेरी अपनी विशेषता है, तुम्हारी अपनी। दोनों समान है। तो Amount of work की दृष्टि से देखा जाए तो सब समान है। छोटा दुकानदार भी उतना ही काम करता है और बड़ा सेठ साहूकार भी उतना ही काम करता है। छोटा हमारा गटनायक भी 24 घंटा काम करता है और सबसे श्रेष्ठ अधिकारी भी 24 घंटे काम करते हैं। ‘अमाउंट ऑफ वर्क’ सबका समान है। यदि सिन्सियरिटि समान है, तो आंतरिकता समान है, तो ‘टाइप ऑफ वर्क में डिफरेंस’ हो सकता है। तो हम जनसंगठनों में है, इसलिए हमने यह कहना कि साहब हमारी तो बहुत बड़ी जिम्मेदारी है

आपको पता ही नहीं है। अरे भाई उनको भारतीय मजदूर संघ के काम का पता नहीं, तुमको दुकानदारी का पता नहीं। उनको Union चलाने को दिया तो वह Union चला नहीं सकते और तुमको दुकान चलाने के लिए बताया तो तुम दुकान खत्म कर दोगे। अलग-अलग आदमी का अलग-अलग काम हो सकता है, लेकिन यह बहानेबाजी करते हुए, हम स्वयं अपने को फंसाने की कोशिश न करें, धोखा देने की कोशिश न करें। तो प्रतिदिन संघ स्थान पर जाना है यह आग्रह हमें रखना चाहिए। आग्रह नहीं रखा तो होगा नहीं। Excuses देने की बात तो हो सकती है। Excuses दी जा सकती है, किंतु इससे काम का नाश होगा यह एक बात। दूसरा भी समझना चाहिए, क्योंकि अपना यह सारा संघ एक परिवार के रूप में है। ऐसा लगता है कि हम काम कर रहे हैं, संपर्क भी बढ़ रहा है तो जरा हमें सहायता करने के लिए संघ की ओर से यहाँ और ज्यादा स्वयंसेवक इसमें भेजे जाने चाहिए। यह बात तो अच्छी है, लेकिन काम करते समय हमारी यह भी दृष्टि होनी चाहिए कि यह टू वे ट्रैफिक हो, वन वे ट्रैफिक नहीं कि यहाँ से तो आदमी इन्वेस्ट हो रहे हैं, लेकिन वहाँ से फिर से कोई वापस आ नहीं रहा, मःाने इन्वेस्टमेंट मिलना चाहिए वेस्ट नहीं होना चाहिए। जितना इन्वेस्टमेंट होगा उस मात्रा में डिविडेंट भी पेरेंट ओर्गेनाइजेशन को मिलना चाहिए। यह भी एक विचार होना चाहिए। यह टू वै ट्रैफिक होना चाहिए। केवल लेना ही लेना है, देने की बात नहीं इस तरह का विचार नहीं होना चाहिए। तो यह भी एक सतर्कता रखने की आवश्यकता है, ताकि कार्य में बैलेंसःेज रहे लेकिन बैलेंसःेज तभी ख्याल में रह सकता है जब आदमी स्वयं अपने को संभालता है। तो यह संपर्क का माध्यम है कि नहीं, जन संगठन है लेकिन संपर्क के माध्यम के रूप में इसका उपयोग बराबर होगा या नहीं होगा

यह इस बात पर अवलंबित है कि वहाँ काम करने वाले हमारे स्वयंसेवकों की मनोवृति क्या है? इस पर अवलंबित है। और मनोवृत्ति दोनों तरह की हो सकती है। हमारी ठीक मनोवृति रही तो हर mass organisation का उपयोग संघ के लिए संपर्क का क्षेत्र बढ़ाने में हम कर सकते हैं और हमारी मनोवृति ठीक न रही तो शायद हमारा अन्य क्षेत्रों में काम करना संघ के लिये Huge Liability के रुप में भी हो सकता है। दोनों हो सकते हैं। तो यह हमारी मनोवृति पर अवलंबित है। दो उदाहरण मेरे स्मरण में हमेशा इस विषय में आते हैं। संपर्क का माध्यम इस नाते से हम विभिन्न क्षेत्रों में जो है, संगठित सामूहिक प्रयास कर रहे हैं। उन्हीं का एक दृश्य स्वरूप यानि जन-संगठन भी कई क्षेत्रों में खड़े हुए लेकिन वहाँ काम करने वाले हमारे स्वयंसेवक बंधुओं की मनोवृति कैसी रह सकती है, दोनों उदाहरण मेरे सामने है। एक तो मैंने बचपन में सिनेमा देखा था वह कहानी भी है। सब लोग जानते हैं सिनेमा का नाम था 'माया मछिंदर'। आपने कहानी भी सुनी है। ज्यादा बताने की आवश्यकता नहीं। मछिन्दर नाथ जी शंकर जी के शिष्य और गोरखनाथ जी के गुरु थे। भिक्षा मांगते-मांगते स्त्री राज्य में चले गए। रानी के यहाँ भिक्षा मांगने गए तो रानी ने कहा आप यहीं ठहरो। क्योंकि वह जरा उनका रूप वगैरा देखकर आसक्त हो गई। कहा कि तुम यहीं ठहरो। मछिन्दर नाथ ने कहा नहीं, यह स्त्री राज्य है। मैं योगीराज हूँ। मैं यहाँ नहीं ठहरुंगा। वह चालाक थी कहा कि 'अच्छा तुम डरते हो, तुमको खुद पर भरोसा नहीं, तुम को लगता है कि तुम हम लोगों के साथ रहोगे, स्त्रियों के साथ रहोगे तो तुम्हारा अध:पतन होगा, स्खलन होगा।' उन्होंने कहा नहीं-नहीं मुझे तो अपने ऊपर पूरा भरोसा है। मैं तो योगियों का राजा हूँ। मेरा क्या स्खलन हो सकता है? तो रानी ने कहा फिर ठहरो यहाँ।

बोले अच्छा मैं ठहरता हूँ। आह्वान को स्वीकार किया लेकिन कहते हैं ठहरने के बाद धीरे-धीरे वहाँ जो एमेनिटीज थी, फैसिलिटीज थी, प्रिविलेजःेज थे उसके शिकार धीरे-धीरे हो गए। ऐसा होता है। आदमी कहता है कि मैं बहुत ध्येयनिष्ठ हूँ, आदर्शवादी हूँ, मेरे ऊपर क्या बुरा असर होता है? लेकिन धीरे-धीरे होता है। एक प्रमाणिक कार्यकर्ता सीपीएम के श्री ए. के. गोपालन जिनकी अभी हाल में मृत्यु हुई है। उन्होंने आत्मचरित्र में बड़ा अच्छा विवरण दिया है। उन्होंने उसमें लिखा है कि हम तो पार्लियामेंट में इसलिए गए थे कि अपने क्रांति के लिए एक फॉर्म के नाते इस पार्लियामेंट का उपयोग करेंगे, लेकिन वहाँ जो गए तो फिर बड़ा बंगला मिल गया या अच्छा फ्लैट मिल गया। फ्लश लैट्रिन में जाने की आदत लग गई। मिनिस्टरों के साथ खाना खाने की आदत लग गई। प्राइम मिनिस्टर के साथ शैक-हैंड करना भी हमारे लिए संभव हो गया। धीरे-धीरे लोग हमारे बंगले में आने लगे। हम बड़े लोगों के बंगले में जाने लगे। फिर केरला में जो बेचारे गंदे बीड़ी मजदूर थे उनके साथ शैक-हैंड करना जरा मुश्किल होने लगा। उनके गले में हाथ डालना जरा कठिन होने लगा तो लगने लगा कि काहे के लिए केरला में तथा गंदी बस्ती में जाना चाहिए। अब साफ-सुथरी बस्तियों में हम रहेंगे यही हमारे लिए अच्छा है। तो कार्यकर्ताओं से हमारा संबंध भी धीरे-धीरे कटने लगा और हम दिल्ली में ही खुश रहने लगे। ऐसा उन्होंने वर्णन दिया है। तो यह ए. के. गोपालन का भी हो सकता है, मछिन्दर नाथ का भी हो सकता है। एक आकर्षक वायुमंडल में रहने के नाते मेरा आधार पतन नहीं हो सकता यह कहते-कहते धीरे धीरे वह परिणाम होता है। फ्लश लैट्रिन मेंटलिटी आ जाती है। तो कहते हैं कि मछिन्दर नाथ का थोड़ा परिणाम हुआ और वह बाहर जाने की इच्छा ही नहीं करते थे। अब गोरखनाथ वगैरह बड़ी

चिंता में थे कि हमारे गुरु महाराज गए कहाँ? खोज करते-करते वह शहर में आए। लोगों से पूछा कि यह कौन साधु महाराज है तो लोगों ने वर्णन दिया कि अरे यह काहे का सन्यासी, यह तो महान ढोंगी है। वह रानी के साथ रहता है। सारे विलास वहाँ कर रहा है तो गोरखनाथ को बड़ा दुख हुआ। उन्होंने सोचा कि जाएंगे, मुलाकात करेंगे। तो लोगों ने कहा कि मुलाकात नहीं कर सकते वहाँ तो सारे Restrictions हैं, आप डायरेक्टली नहीं जा सकेंगे। शिष्य के नाते फिर क्या करना तो भिखारी के रूप में गोरखनाथ और उनके जो साथी थे वह वहाँ पहुंचे, जहाँ मछिंद्रनाथ थे। बगीचे में वह दोनों झूल रहे थे, रानी और मछंदर नाथ। वहाँ यह भिखारी पहुंचे और उन्होंने अपना ढोलक बजाना शुरू किया। अब वह योगी पुरुष थे ना, इसलिए ऐसा वहाँ चमत्कार हुआ कि रानी भी वहाँ थी, मछिंद्रनाथ भी वहाँ थे, लेकिन यह जो ढोलक बज रहा था उसमें रानी को तो आवाज सुनाई देता था, बोल सुनाई देते थे कि डुम-डुम डुम-डुम डुम-डुम यही सुनाई देता था जैसे ढोलक के बोल होते हैं। तो रानी तो केवल डुम-डुम सुनती थी, लेकिन मछिंद्रनाथ को उसमें से बोल सुनाई देते थे 'चलो मछिंदर गोरख आया-चलो मछिंदर गोरख आया' यह बोल मछिन्दर नाथ को सुनाई देते थे। उन्होंने भिखारियों की ओर देखा, उनका ढोलक देखा, मछिन्दरनाथ में यह बोल सुने 'चलो मछिंदर गोरख आया' तो घबरा गए। सोचा मेरा गटनायक मुझे यहाँ छोड़ने को भी तैयार नहीं। मैं तो सबको टालकर यहाँ पहुंच गया था लेकिन मेरा पीछा करता हुआ मेरा गटनायक यहाँ भी पहुंच गया है। और फिर कहते हैं कि वह रात के समय भाग गए। इससे अपने को अपने कोई संपर्क नहीं। लेकिन मैं अच्छा हूँ, मैं अच्छा स्वयंसेवक हूँ। क्या मेरा स्खलन हो सकता है? ऐसे कहते-कहते माया-मछिंदर हो सकता है। हम स्वयं

अपने बारे में सतर्क नहीं रहेंगे तो ऐसा हो सकता है। लेकिन सतर्क रहे तो दूसरा भी हो सकता है। आदर्श व्यवहार हमारा हो सकता है। उसका भी एक उदाहरण हमारे यहाँ आता है। देवासुर संग्राम चल रहा था। इस देवासुर संग्राम में सर्जरी की जो विद्या थी वह असुरों के गुरु शुक्राचार्य के पास थी। और उनसे वह विद्या सीखने के लिए किसी को भेजा जाए यह देवताओं ने सोचा। तो बृहस्पति के पुत्र कचदेव इनको वहाँ भेजा और फिर वहाँ उन्होंने रहते हुए वह विद्या सीखी। विद्या सीख कर वापस आने के लिए निकले तो इतने दिन जो विद्या सीखने के लिए शुक्राचार्य के पास रहे थे, उस काल में इनकी गुणवत्ता के कारण और सौंदर्य के कारण शुक्राचार्य की लड़की देवयानी उन पर आसक्त हो गई और जब वह आने के लिए निकले तो उसको दुख हुआ और उनका उतरीय उसने पकड़ लिया और कहा कि 'नहीं! मैं ऐसे तुमको जाने नहीं दूंगी, मेरे साथ विवाह करना होगा और हम दोनों मिलकर ही जाएंगे, मैं अकेले नहीं जाने दूंगी।' अब आज इसका विचार कैसा होगा कहना कठिन है, क्योंकि आज भी तो लोग अमेरिका और इंग्लैंड में सीखने के लिए जाते हैं और डॉक्टरेट प्राप्त होता है या नहीं पता नहीं लेकिन देवयानी को लेकर वापस आते हैं। विद्या तो शायद आती नहीं लेकिन देवयानी आ जाती है। लेकिन इतने मॉडर्न प्रोग्रेसिव कच देव नहीं थे। वह धेय्य निष्ठ थे, आदर्शवादी थे एकाग्रचित से ध्येय की साधना करने वाले थे, इसलिए उन्होंने विद्या तो प्राप्त कर ली किंतु सौंदर्यशाली देवयानी को कहा कि नहीं, तुम मेरी भगिनी हो। क्योंकि इनको जो प्रोग्राम दिया था उसमें विद्या प्राप्त करना यही इनके एजेंडा पर विषय था। देवयानी के साथ प्यार करना यह विषय उनके एजेंडा पर नहीं दिया था, इसलिए उन्होंने कहा कि मैं तो विद्या प्राप्ति के लिए आया हूँ, विद्या

प्राप्त करके जा रहा हूँ, मैं विवाह वगैरह नहीं करूंगा। तुम मेरी गुरु-भगिनी हो, यह कहते हुए जैसे गए वैसे ही वापस आए।

अब दोनों ही मनोवृत्तियां हो सकती है। हमारा कार्यकर्ता विभिन्न जन-संगठनों में काम करने वाला माया-मछिंदर भी बन सकता है, कचदेव के समान भी हो सकता है। यह तो उसके ऊपर है। ऊपर से पानी डालने से गंगा नहीं बन सकती। यह स्वयं अपने को ठीक रखने से ही यह सारा काम हो सकता है। तो यह यदि हमने किया, जहाँ जहाँ जनसंगठन है वहाँ यदि हमने काम किया और अपने को स्वयंसेवक के नाते अच्छा रखा तो फिर संपर्क के माध्यम के रूप में अनेक माध्यमों में से एक माध्यम याने जनसंगठन, मास ऑर्गनाइजेशन उनका पूरा उपयोग संघकार्य के विस्तार के लिए हो सकता है। अब इस तरह से अपने कार्य की जो कुल रचना है वह रचना ध्यान में रखकर हम काम करेंगे तो शास्त्रीय ढंग से काम होगा और यह रचना क्या है तो संक्षेप में मैं दोहराऊंगा की राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का अपना एक ध्येय है, इसका विवरण यहाँ देने की आवश्यकता नही। इस ध्येय की सिद्धि के लिए विशेष कार्य-पद्धति का निर्माण, विकास संघ ने किया है यह संघ की विशेषता रही है।

यह कार्य पद्धति स्वयंपूर्ण है दोनों अर्थों में कि यदि इस कार्यपद्धति को लेकर चलते हैं तो संघ का ध्येय सिद्ध करने के लिए दूसरी किसी भी पूरक कार्य पद्धति की आवश्यकता नहीं है और किसी भी मोह के कारण यदि हम इस कार्य पद्धति को छोड़ देते हैं तो कोई भी दूसरी ऐसी वैकल्पिक, Substitute, Alternative कार्य पद्धति नहीं जो हमें वहाँ पहुंचाएगी जहाँ हमें संघ पहुंचाना चाहता है। दोनों और अर्थ में संघ की कार्य पद्धति स्वयंपूर्ण है और संघ का

यह जो विस्तार है इसका माध्यम कुछ होगा वह संपर्क है। व्यक्तिगत जीवन में जहाँ-जहाँ हमारा जिसके साथ संबंध आता है वहाँ-वहाँ संघ को दृष्टि में रखते हुए हम व्यवहार करेंगे तो 24 घंटा हम संघ को बढ़ाने का काम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कर सकते हैं। इस दृष्टि से संघ हमारे हर एक स्वयंसेवक के दृष्टि में आ जाए यह बहुत आवश्यक बात है। संघ दृष्टि में आएगा तो जहाँ कहीं हम जीवन में काम करते हैं वहाँ हमारे संपर्क में आने वाले हर एक व्यक्ति के विषय में हम पोटेंशियल स्वयंसेवक के नाते सोचेंगे और उसके साथ व्यवहार करेंगे जिसके कारण संघ का कार्य बढ़ सकता है, लेकिन इस तरह से जहाँ संपर्क हम जगह-जगह बढ़ा रहे हैं वहाँ यदि किसी कार्य क्षेत्र में ज्यादा संख्या में स्वयंसेवक है, सारे जागरूक है, उसी एक क्षेत्र में अपना संपर्क का कार्य वह कर रहे हैं तो विभिन्न लोगों के जो अलग-अलग प्रयास है उसमें एक सूत्रता (को-ओर्डिनेशन) आनी चाहिए। इस दृष्टि से संपर्क के प्रयास को संगठित करते हैं जिसका विस्तृत परिणाम इस नाते, जनसंगठन दिखाई देते हैं। ऐसी यदि परि्स्थिति रही तो ऐसे जन संगठनों में काम करने वाले हमारे स्वयंसेवकों को अपनी मूल भूमिका को कचदेव के समान हमेशा ख्याल में रखते हुए काम करना चाहिए और यह टू वै ट्रैफिक चलना चाहिए। ऐसा यदि हम अपनी जिम्मेवारी का निर्वाह करेंगे तो कुल मिलाकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की जो कार्य पद्धति है उसको सफलता से हम निभा सकेंगे। यह ख्याल में रखते हुए दिन प्रतिदिन का अपना हमारा व्यवहार रहे। इतना ही कहना इस समय पर्याप्त है।

(सम्प्रति २४ जुलाई १९७८ को कलकत्ते के नोकरी-पेशा करनेवाले स्वयंसेवकों के समक्ष दिया गया भाषण यहाँ अविकल रूप से प्रस्तुत है।)